RESEARCH REVIEW JOURNALS
Volume-04
Issue-03
March-2019

ISSN: 2455-3085 (Online)
RESEARCH REVIEW International Journal of Multidisciplinary
www.rrjournals.com[UGC Listed Journal]

प्राचीन भारतीय अभिलेखों में वर्णित वैष्णव मत की ऐतिहासिकताः

डॉ0 प्रशान्त उपाध्याय

असिस्टेन्ट प्रो0–प्राचीन इतिहास विभाग स्व0रामराज वर्मा पी0जी0कालेज सारंगपुर,सुलतानपुर(उ0प्र0)

राजा हर्षवर्द्धन के पश्चात् भारतीय इतिहास का वह युग प्रारम्भ हुआ, जिसे राजपूत का कहते हैं। इस काल में अनेक राजपूत राजबंश भारत के विविध प्रदेशों में शासन करने लग गये थे। देश में कोई एक शक्तिशाली साम्राज्य नहीं रह गया था। इस युग में भी वैष्णव धर्म की भारत में प्रधानता रही। खालिसपुर दान–पत्र में 'ओम् नमो नाराणाय' से विष्णु को प्रणाम निवेदन किया गया है। इसी प्रकार 'ओम् नमो भगवते वासुदेवाय' से विष्णु के प्रति प्रणाम निवेदन का एक प्रकार था। उत्तरीबंगाल के पहाड़पुर नामक स्थान पर मध्यकाल की जो अनेक कलाकृतियाँ विद्यमान हैं, उनमें गोबर्द्धनधारी कृष्ण की प्रतिमा भी है। प्रतिहार वंश के राजा भोज के एक अभिलेख में विष्णु को नमस्कार करने के अनन्तर उन्हें निर्गुण और सगुण दोनो रूपों में कहा गया है। राजपूतकाल में बहुत से विष्णु मन्दिरों का भी निर्माण हुआ, जिनका उल्लेख इस काल के अभिलेखों में विद्यमान है। चन्देल राजा परमर्दि के वटेश्वर अभिलेख में इस राजा द्वारा बनाये गये 'वैष्णव प्रासाद' और उसमें स्थापित हरि का उल्लेख है। खजुराहो में चन्देल राजाओं ने बहुत मन्दिरों का निर्माण कराया था, जिनमें अनेक विष्णु मन्दिर भी थे। बंगाल के पाल वंशी राजा धर्मपाल के काल में बने एक विष्णु मन्दिर का उल्लेख उसके एक अभिलेख में विद्यमान है। पाल वंशी नारायण पाल के समय के एक अभिलेख में गरूड़ध्वज का उल्लेख है।बंगाल के सेनवंशी राजाओं ने कतिपय अभिलेखों में अपने नाम के साथ परम वैष्णव विरुद का प्रयोग किया है। चाहमान, गहड़वाल तथा कलचूरियों के अभिलेखों में भी विष्णु मन्दिरों तथा प्रतिमाओं के पूजन का निर्देश मिलता है।

राजपूतयुग की विष्णु की अनेक मूर्तियां इस समय पाई गई हैं, जिनमें उन्हें अपने हाथों में शंख, चक्र, गदा और पद्म लिए हुए बनाया गया है। विष्णु के साथ लक्ष्मी और गरूड़ की मूर्तियां बनाने की प्रथा भी इस समय विद्यमान थी। चेदिवंश के राजा गांगेयदेव, चन्देल राजा कीर्तिवर्मा और कश्मीर की रानी दिद्धा के ऐसे सिक्के मिले हैं जिन पर लक्ष्मी की मूर्ति अंकित है।विष्णुके विभिन्न अवतारों की मूर्तियां जिस ढंग से गुप्तवंश के शासनकाल में बनायी जाती थी, वैसे ही राजपूत काल में भी बनायी जाती रही। मत्स्य, वाराह, नरसिंह, कूर्म, राम, कृष्ण आदि के रूप में विष्णु ने जो अवतार लिए थे, राजपूत युग के अनेक अभिलेखों में उनका भी उल्लेख किया गया है और अनेक मूर्तियां भी मिली हैं जो इसी युग की हैं। इन सब तथ्यों को दृष्टि में रखने पर इस बात में कोई सन्देह नहीं कि भारतीय इतिहास के मध्ययुग में वैष्णव धर्म उन्नत दशा में था।

विष्णु अथवा भागवत धर्मब्राह्मण धर्म के एक प्रमुख सम्प्रदाय के रूप में था। वैष्णव धर्म जो गुप्तयुग में काफी फूला–फला, इस युग में नया रूप धारण कर लिया। पूर्वयुग में तो वैष्णव धर्म को बौद्ध धर्म ने ग्रसित कर लिया था। पर पुनः इस युग में भगवान बुद्ध ने विष्णु का रूप धारण कर लिया तथा शेष बौद्ध धर्मानुयायी वैष्णव हो गये थे। बौद्ध धर्म के विशेष तत्व 'अहिंसा' के सिद्धान्त को वैष्णव मतावलम्बियों ने दृढ़ता के साथ अवलम्बन किया। वैष्णवों ने अहिंसा को समाज में वह महत्व दिया जो उसे पहले अप्राप्य था। वैष्णव द्वारा इस प्रकार अहिंसा के सिद्धान्त को ग्रहण करने से जैन धर्म को भी काफी धक्का लगा। नये वैष्णव सम्प्रदाय के अन्तर्गत वैदिक यज्ञों में होने वाले पशुवध पर पूर्णतया रोक लग गया। भगवान विष्णु के दशावतारों में बुद्ध को स्थान प्राप्त हुआ और फलस्वरुप वैष्णव ने इसे अपना एक प्रमुख देव मान लिया। लोगों को अपने पूर्व परिचित भगवान विष्णु की अराधना अब अहिंसा के साथ श्रीकृष्ण के रूप में करना बड़ा ही आकर्षक ज्ञात हुआ। वैष्णवों ने वस्तुतः पशुवध और माँस–भक्षण का परित्याग कर दिया।

यद्यपि नव वैष्णव सम्प्रदाय और जैनधर्म में अहिंसा के सिद्धान्त के फलस्वरुप काफी समानता थी, तो भी आतम–संयम और आत्म–त्याग के वैचारिक तत्वों में पूर्णतया भिन्नता थी। एक तरफ जहाँ वैष्णव धर्म ने समाज में अहिसां की व्यापकता की मान्यता स्थिर की और उसके व्यावहारिक पहलू की शिक्षा दी, वहाँ इसने सांसारिक विभूतियों के भोग का भी अनूठा मार्ग प्रस्तुत किया। श्रीकृष्ण की इहलीला ने सात्विक मार्ग से संसार के उपभोग का व्यावहारिक उदाहरण प्रस्तुत किया। उनकी भक्ति ने बंगाल और मध्य भारत में तद्युगीन भोग श्रेष्ठवाद को जन्म दिया, जो अल्पकाल में ही अत्यधिक लोकप्रिय हो गया। प्रत्यक्षतः इसका परिणाम यह देखा गया कि इस नवीन वैष्णव धर्म में 'भावात्मक उच्छृंखलता' प्रधान तत्व बन गयी। श्रीकृष्ण और गोपियों का गठबन्धन ही वैष्णव मत का मुख्य सिद्धान्त बना। किन्तु अभी तक राधा की कल्पना का समावेश नहीं हो पाया था।

राजस्थान संग्रहालय में प्राप्त मूर्तियों के संग्रह से ऐसा प्रतीत होता है कि किसी समय विष्णु राजस्थान के जनसमाज के प्रसिद्ध देव थे। पृथ्वीराज विजय से ज्ञात होता है कि शाकम्भरी के राजा चामुण्डराज (1040–65ई0)ने नरवर नामक स्थान पर एक विष्णु मन्दिर का निर्माण कराया था। राजा अर्णोराज विष्णु का परमभक्त था। चौहाननृपति सोनेश्वर ने राजधानी में भगवान विष्णु के मन्दिर का निर्माण करवाया था। पृथ्वीराजद्वितीय और तृतीय अपने को राम का अवतार मानते थे। ऐसा भीउल्लेख मिलता है कि बाल्यावस्था में पृथ्वीराज तृतीय अपने गले में विष्णु के दशावतार को आभूषण की भाँमि धारण करता था। अर्णोराजऔर अजयराज ने वैष्णव गुरू देवबोधि को आश्रय दिया था, जिसने राजस्थान में भागवत धर्म को व्यापक बनाया। अभिलेखीय साक्ष्यों से भी उनके धार्मिक सहिष्णुता एवं उदारता का ज्ञात प्राप्त होता है। पृथ्वीराज द्वितीय विष्णु के विभिन्न प्रतिरूपों में भगवान मुरारी की स्तुति

RRIJM 2015, All Rights Reserved

करता था। नड्डुल का राजा रतनपाल विष्णु की पूजा करता था। उसी वंश का राजपुत्र कीर्तिपाल विष्णु को 'श्रीधर' के रूप में पूजता था। कुछसमय के लिए विष्णु की पूजाअपराजितेश केरूप में की जाती थी। इस प्रकार हम देखते हैं कि भगवान विष्णु की पूजा विभिन्न नामों से की जाती थी।

वैष्णव मत कई नामों से जाना जाता है। पहले यह 'ऐकांतिक धर्म' कहलाया।वासुदेव की उपासना पद्धति के कारण इसे 'भागवत मत'भी करने लगे। पुरूष नारायण ने 'पांचरात्र सत्र' का आयोजन किया। अतः 'पांचरात्र' अथवा 'पांचरात्रिक मत' भी कहा जाने लगा। वैष्णव नाम का उपयोग सबसे पहले महाभारत के स्वर्गारोहण पर्व में मिलता है। कालान्तर में यही नाम अधिक जनप्रिय हुआ। पूर्व मध्ययुग में वैष्णव मत इन सभी नामों से जाना जाता था। ये विष्णु सम्प्रदाय के पर्यायवाची बन गये। इनका पूरी तरह से एकीकरण हो गया। फिर भी यह मत वैष्णव सम्प्रदाय के नाम से ही अधिक लोकप्रिय रहा।

वैष्णव मत से अभिप्रायः–

वैष्णव मत एक आस्तिकतावादी मत है। विष्णु इस धर्म के सर्वोच्च देवता हैं। वैदिक देव मानकर उनकी पूजा की जाती है। वेही उपास्य हैं। विष्णुको प्रधान उपास्य देव मानने वाले भक्त वैष्णव कहे गये। इनवैष्णव साधकों के अनुसार समस्त विश्व उस ऐश्वर्यशाली विष्णु की शक्तियों की अभिव्यक्ति मात्र है। उनमेंव सृष्टि में कोई अन्तर नहीं है। वासुदेव–कृष्ण की पूजा के मूल में वीर–पूजा का भाव अधिक है। कालान्तरमें इसने रूढ़ रूप धारण कर लिया।हिन्दुओं ने जब अनार्य लिंगदेव शिव क संहारक और सर्जक के रूप में उपयोग करना आरम्भ कर दिया तो उन्होने पालक विष्णु को प्रतिस्पर्द्धी ईश्वर के रूप में प्रस्तुत किया।

वैष्णव मत की उत्पत्तिः–

वैष्णव मत की उत्पत्ति, इतिहास का जटिल विवादास्पद विषय है।वैष्णव धर्म से संबंधित नारायण वासुदेव, कृष्ण, संकर्षण, को डॉ0 सुवीर जायसवाल अवैदिक देवता मानती हैं। वे नारायणको अनार्य उत्पत्ति का, संकर्षण को अनार्यदेव शिव से संबंधित तथा वासुदेव–कृष्णके मत को भी अवैदिक और अनार्य तत्वों से भरा दर्शाती हैं। परन्तु अपने तर्कों के समर्थन में वे कोई पुरातत्वीय एवं साहित्यिक प्रमाण प्रस्तुत नहीं करती। उनका आधार कल्पना और तर्क ही है। उन्होंने नारायण, वासुदेव आदि को देवत्य प्रदान कर उन्हें देवता माना है।परन्तु सिंधु सभ्यता में प्राप्त पुरातत्वीय सामग्री में शिव–शक्ति के अतिरिक्त किसी ऐसे देवता की मुहर आदि प्राप्त नहीं हुई, जिनकी देवता मानकर पूजा की जाती थी।

विष्णुः–

ऋग्वेद में जिन देवताओं की सूची दी गई है, उनमें भी नारायण, संकर्षण और वासुदेव–कृष्ण आदि नाम नहीं मिलते हैं। अतः विष्णु–धर्म से संबंधित ये नाम बाद के कालों की देन हैं। ऋग्वेद में विष्णु का ही उल्लेख मिलता है। वे सूर्य का रूप है।शिव–शक्ति की तुलना में विष्णु और उसका सम्प्रदाय अपेक्षाकृत नया है। ऋग्वेद में विष्णु का द्युस का पुत्र और तीन पगों में पृथ्वी–आकाश में विचरण करने वाला निरूपित किया गया है।विद्वानों ने विष्णु को 'दिव्य स्थान' अथवा 'स्वर्गस्थ' देवों की श्रेणी में रखा है।सूर्य और आदित्यों के साथ उनकी गणना की गयी है। उन्हें अक्सर सूर्यदेवता के साथ ही ऋग्वेद में समीकृत किया गया है।अतः विष्णु को 'उरू–गाय' और 'उरू–क्रम' माना गया।विष्णु, सूर्य के गुणों का, संभवतया स्वरूप थे। उन्होंने विश्व, पृथ्वी, वायु और स्वर्ग को माप लिया था।

श्री हंटर,विष्णु को अपने अवतरण के समय से एक मानवीय देवता होते हुए भी सूर्य अथवा सौर से संबंधित मानते थे। बाद में वे पुराण–कथा बन गये।वे सूर्य के उदय, उत्कर्ष और असत से संबंधित हैं।यह आर्यों के धार्मिक विश्वासों का रचना काल था। अतएव विष्णु के प्रमुख का प्रश्न ही नहीं उठता। आर्यसभ्यता के निरन्तर विकास के साथ ही देवताओं की स्थिति में भी परिवर्तन हुआ। उत्तर वैदिक काल में सूर्य के अंश के रूप में विष्णु प्रतिष्ठित रहे। परन्तु वे धीरे–धीरे जन–देवता बन रहे थे।इस काल में 'पुरूष' अथवा 'परमेश्वर' की धारणा का विकास कर उनका संबंध नर एवं नारायण से किया गया।

ब्राह्मण युग में यज्ञ संस्था के विपुल विकास के साथ देव मंडल में विष्णु का महत्व भी पूर्व से अधिक हो गया। विष्णु की एकता यज्ञ से स्थापित कर उन्हें समस्त देवताओं में श्रेष्ठ और पवित्रतम माना जाने लगा।शतपथ ब्राह्मण ने भी विष्णु की उच्चता का समर्थन किया।यज्ञों से संबंधित हो जाने के कारण विष्णु को भी बलि और यज्ञ का भाग दिया जाने लगा था। ब्राह्मण साहित्य में अवतारवादकी कल्पना को भी स्थान मिला। कालांतर में इसने विष्णु की लोकप्रियता में सहयोग दिया। इसने ब्रह्म और विश्वदेववादी विचारधारा को विकसित किया। ईश्वरवादी आंदोलन का भी आरम्भ इसने किया। बाद में सदियों में यही वैष्णववाद के नाम विख्यात हुआ।

वैष्णव धर्म की समन्वयताः–

वैष्णव धर्म का उपरोक्त ऐतिहासिक विश्लेषण यह दर्शाता है कि यह मत किसी एक व्यक्ति द्वारा नही चलाया गया। विष्णु तो एक वैदिक कालीन देव थे। धीरे–धीरे उनका महत्व बढ़ा। वैदिक एवं उत्तर वैदिक काल के बाद धर्म के क्षेत्र में नई प्रवृत्तियां विकसित हो रही थीं। क्षत्रिय और स्वयं कई कविगण वैदिक कर्मकाण्ड, बलि आदि के आलोचक थे। तब ब्राह्मण–क्षत्रिय स्पर्धा ने नये सुधारवादी आन्दोलनों को जन्म दिया। कई ब्राह्मण ऋषि भी इन सुधारों के पक्ष में थे। ऋषि नारायण, वैदिक ऋषि कृष्ण अथवा घोर आंगिरस के शिष्य कृष्ण इनमें प्रमुख थे। सात्वत और उनके अग्रणी वासुदेव भी इस दिशा में कार्यरत थे। इन सभी ने आर्जव एकांतिक भक्ति, अहिंसा आदि का समर्थन किया। अतः वैष्णव मत तीन प्रमुख धाराओं – नारायण और उनके पांचरात्रिक धर्म, वासुदेव–सात्वत तथा उनके क्षत्रिय सहयोगियों और कृष्ण व उनके अनुयायियों के सात्वत का प्रतीक बन गया। आभीरों के गोपाल–कृष्ण की मानव प्रेम से ओत–प्रोत बाल–लीलाएं भी इसमें आत्मसात हो गयी।

धर्मनिष्ठ विद्वान ब्राह्मणों ने इन विभिन्न धाराओं को समीकृत करने में भगीरथ प्रयत्न किया। ब्राह्मणों, महाकाव्यों के रचयिताओं और बाद के पुराणकारों ने नारायण, वासुदेव और कृष्ण उपासना की विभिन्न धाराओं को मोड़कर उसे वैदिक विष्णु से समन्वित कर दिया। यह तादात्म्य सरलतापूर्वक सम्पन्न हुआ, क्योंकि नारायण, वासुदेव और कृष्ण के उदार, दया तथा मानव और सृष्टि के कल्याण की भावनाओं से समानता थी। साथ ही इनका सम्बन्ध जल से भी था। अतःवे विष्णु के निकट थे। ब्राह्मणों द्वारा एक देवता को

RRIJM 2015, All Rights Reserved

दूसरे से मिलाना एक सामान्य प्रक्रिया रही है। पाणिनी के बाद के कालों में उन्होने विष्णु को एक अन्य पूज्य देवता अग्नि से मिलाकर 'आग्ना वैष्णव वरू' की पूजा का चलन किया। ब्राह्मणों ने विष्णु के साथ भी यही किया।

ब्राह्मणों के इस प्रयत्न के पीछे शायद सुनिश्चित उद्देश्य था। वे अपना याजकीय प्रयत्न बनाये रखना चाहते थे। अतः उन्होने लोकप्रिय कृष्ण–वासुदेव को सूर्यदेव से सम्बन्धित ऋग्वैदिक विष्णु से मिश्रित कर दिया। ब्राह्मणवाद विजय के लिए तुला हुआ था। जिन–जिन जनप्रिय मतों को वह उखाड़ नहीं सकता था, उन्हें उसने आत्मसात् करने का प्रयत्न किया। इस ध्येय को पाने की रीति अत्यन्त साधारण थी। उन्होंने एक देव को दूसरे से समन्वित कर दिया। तैत्तिरीयआरण्यक इसका उदाहरण है। ब्राह्मणों ने इस आरण्यक में स्पष्ट रूप से घोषित किया, 'नारायणाय विद्महे, वासुदेवायधीमही, तन्नो विष्णुप्रचोदयात्', अर्थात् नारायण, वासुदेव और विष्णु एक ही देव के विभिन्न नाम हैं। महाभारत, गीता, पुराण, बौधायन, सूत्र व अन्य ग्रन्थों ने इसे चरम पूर्णता पर पहुंचाया।

यहां एक तथ्य और ध्यान देने योग्य है। जैन, बौद्ध और वैष्णव मत के प्रतिपादक क्षत्रिय थे। उनका केन्द्र पूर्व और पश्चिम भारत था।उन्होंने वेदों की अपौरूषेयता (सर्वोच्चता) के सिद्धान्त का विरोध किया। वे यह भी नही मानते थे कि वेदों में प्रतिपादित कर्मकांड ही मुक्ति का मुख्य साधन है। परन्तु उनमें आधार भूत अंतर भी था। नारायण, वासदेव और कृष्ण के सुधारवादी विचार वेदों के प्रति निषेधात्मक नहीं थे। उनके नूतन धार्मिक विचार याज्ञिक विधान तथा पशुवध के विरूद्ध थे। वे अहिंसा एवं भक्ति के पक्ष में थे। भक्ति के कारण वह अनीश्वरवादी भी न थे। वे पूर्णतया आस्तिकतावादी और ईश्वरवादी बने रहे। इस कारण से उनका समन्वन वैदिक विष्णु से स्थापित करने में ब्राह्माणें को असुविधा और कठिनाई नहीं हुई होगी। उन्होंने जैन, बौद्ध धर्मों को भी नहीं छोड़ा। ऋषभदेव और बुद्ध को पुराणकारों ने विष्णु का अवतार घोषित कर दिया। नारायण, वासदेव,कृष्ण और विष्णु का तादात्म्य ईसापूर्व की तीसरी, चौथी सदी तक पूर्व हो चुका था।शायद यह उसके भी पूर्व हुआ हो तो आश्चर्य नहीं।नारायण, वासुदेव, कृश्ण और विश्णु के समन्वय की इस भावना ने यदि अवतारवाद के सिद्धान्त को भी प्रेरित किया हो तो आश्चर्य नहीं। अवतारवाद वैश्णव धर्म की एक महत्वपूर्ण उपलब्धि रहा।

अवतारवादः–

अवतारवादवैष्णव मत की विशेषता है। इसने उसे व्यवस्थित और संगठित करने में विशेष योग दिया। अवतारवाद के सिद्धान्त की उत्पत्ति पर विद्वानों में मतभेद है। जैन धर्म में चौबीस तीर्थकरों का उल्लेख मिलता है। बुद्ध के अवतारों की भी कल्पना की गई है।'बोधिसत्व' और 'प्रत्येक बुद्ध' के विचार ने भी इसे प्रभावित किया होगा। परन्तु यहां ध्यान देने योग्य तथ्य यह है कि इस पर देवत्व का आरोप बहुत बाद में हुआ। इसके विपरीत विष्णु ऋग्वैदिक कालीन कविताओं में से एक थे।उनके वराहवतार का संकेत ऋग्वेद में मिलता है। उपनिषदों में परमात्मा के विभिन्न रूपों में प्रकट होने का प्रतिपादन है। यह मानागया कि अनेक देव एक हैं तो एक देव भी अनेक हो सकता है। इसी ने अवतारों की कलपना को जन्म दिया। ब्राह्मण साहित्य, जो निश्चय ही प्राचीन है, में भी वामन, मत्स्य, कूर्म, आदि अवतारों की चर्चा की गई है। इन आश्चर्यजनक प्राणियों, जिनके पास रहस्यात्मक शक्ति थी, ने भी अवतारवाद को प्रभावित किया था। अतः अवतारवाद, बौद्ध–जैन धर्मो की तुलना में अधिक प्राचीन है। यदि वैष्णव मत से संबंधित इस अवतारवाद ने बाद के जैन–बौद्ध धर्मो को प्रभावित किया हो तो आश्चर्य नही।

महाभारत के शांति पर्व के 'नारायणीय खंड, में विष्णु के अवतारों का उल्लेख अधिक स्पष्ट है। गीता ने इसे पुष्ट किया। वासुदेव, वैष्णव धर्म की प्रतिस्थापना, साधुओं के परित्राण और दुष्टों के विनाश हेतु अवतार(सृजाम्यहम्) लेते हैं। विष्णु कामहत्व उनके अवतारों में ही नही, वरन उनके नाभि–कमल से ब्रह्मा की भी उत्पत्ति मान ली गई। अन्य ग्रन्थों में इसकी प्रतिध्वनि मात्र है। अवतारवाद नारायण, कृष्ण, वासुदेव और विष्णु के समन्वय के बाद अधिक विकसित हुआ। इनके तादात्म्य ने भी उसे गति दी हो तो आश्चर्य नहीं।

अवतारवाद वैष्णव मत के विकास की एक नई सीढ़ी सिद्ध हुआ। इसने इसे नई गति प्रदान की। पौराणिक साहित्य में इसने नई ऊँचाई प्राप्त की। अलग–अलग लेखकों ने विष्णु के अलग–अलग अवतार बतलाये। आरम्भ में छः अवतार थे। बाद में ये दस माने गये। इनमें वराह, मत्स्य, कूर्म और नृसिंह अवतारों की पशु तथा मानव के मिश्रण से रचना की गई। इन मिश्रित अवतारों को अंग्रेज विद्वान प्राकृति और सृष्टि के विकासवादी सिद्धान्त से जोड़ते हैं। मत्स्य, कूर्म, वराह और नृसिंह पुरातन पशु थे। ये जीवन की, मछली, रेगनेवाले जन्तुओं और स्तनपायियों से होते हुए अर्द्धमानव के रूप में विकसित होने वाली प्रगति को दर्शाते हैं। श्री हंटर के विचार से मत्स्य प्रजनीय योनि है, कूर्म–लिंग, वराह, लौकिक उर्वरक (Terrestrial Fertilizer) तथा नृसिंह,दिव्यता(Celestial) हैं। यह अवतारवाद की तोड़–मरोड़ है। प्रथम दृष्टिकोण तो सही हो सकता है, परन्तु दुसरा अव्यावहारिक है।

नृसिंह, वराह, मत्स्य, कूर्म अवतारों का संदर्भ तैत्तिरीय और शतपथ ब्राह्मणों में मिलता है। वामन अवतार का उल्लेख वैदिक साहित्य में है, क्योंकि सूर्य से संबंधित होने से तीन पगों में उन्होंने ब्रह्मांड नापा था। परशुराम, राम, वासुदेव कृष्ण, हंस, कतिक, दत्तात्रेय, व्यास, धन्वंतरी, मोहिनी के साथ बुद्ध और जैन तीर्थकर ऋषभदेव भी अवतारों में सम्मिलित कर लिये गये।शायद बौद्ध–जैन धर्मों की लोकप्रियता को धक्का लगाने हेतु ही बुद्ध व ऋषभदेव को अवतारों मेंसम्मिलित किया गया था। इनमें सनत्कुमार, नारायण, नारद, पृथु भी मिला लिये गये। ऐसा लगता है कि ऐतिहासिक स्तर पर जिस किसी भी अलौकिक व्यक्तित्व ने ज्ञान अथवा समाज कल्याण के क्षेत्र में विशिष्ट सेवाएं की, उन्हें अवतारों में स्थान मिलता चला गया। वे विष्णु से संबंधित कर दिये गये।

सतत्कुमार, नारायण, कृष्ण, नारद, पृथु और परशुराम वास्तव में ऋषि थे। वैदिक ऋचाओं के निर्माण में इनका प्रमुख हाथ था। कुछ विद्धानों ने तो अर्द्धमानव अवतारों को भी पुरातन ऋषि माना है। मत्स्य, कूर्म, नृसिंह आदि तो उनके वंश तथा गोत्रों के परिचायक मात्र हैं। मत्स्य, कूर्म, नृसिंह आदि तो उनके वंश तथा गोत्रों के परिचायक है। इनमें से कुछ वर्णों केनाम उनके संबोधन सूचक नामों पर आधारित हैं। शौनक, मत्स्य इसी श्रेणी में आते है।

अवतारवाद के सिद्धान्त में एक तथ्य विशेष रूप से ध्यान देने योग्य है। किसी भी योनि में अवतार लेने के बाद भी अवतारी पुरुष अपने देवत्व और स्वयं के विष्णु का अंशधारी

RRIJM 2015, All Rights Reserved

होने के प्रति सदैव सजग रहता है। वह परमात्मा, ईश्वर अथवा विष्णु का ही रूप है। वह अपने अवतार के उद्देश्य से भी परिचित है। इसीलिए 'सत्कर्म पुरुष' और भक्ति–उपासना का केन्द्र है। अपने कार्य की समाप्ति के बाद कृष्णावती लीला समेटकर विष्णु में विलीन हो जाता है।

वैष्णव दर्शनः–

वैष्णव दर्शन का विकास भारतीय दर्शन की मुख्य कड़ी है। नारायण, वासुदेव, कृष्ण आदि ने इसे दार्शनिक आधार प्रदान किया। इसके द्वारा प्रारम्भ में किये गये कार्य को पूर्व मध्य युग और मध्य युग में रामानुज, मध्वाचार्य, निम्बार्क, रामानन्द आदि ने आगे बढ़ाया। महाभारत का नारायणीय खण्ड, भागवत, गीता, पांचरात्र सिद्धान्त विष्णु पुराण आदि का मिश्रण ही वैष्णव–दर्शन है।जिस प्रकार नारायण–वासुदेव–कृष्ण का समन्वय हुआ, उसी प्रकार से इनके द्वारा प्रतिपादित मार्ग वैष्णव दर्शन माना गया।

वैदिक कर्मकांड और बलि का विरोध उपनिषद् साहित्य में प्रतिध्वनित हुआ। वैष्णव मत के चिंतक ऋषि नारायण और कृष्ण आंगिरस ने तो वैदिक काल में ही नयी प्रवृत्तियों का प्रणयन कर डाला था। वैष्णव दर्शन के चिंतक इसके अपवाद न थे। उपनिषदों ने मुक्त चिंतन की धारा को अधिक परिपुष्ट किया। मुक्ति के लिए एकांतिक धर्म, दर्शन और भक्ति का उन्होने प्रतिपादन किया। उपनिषदकारों के समर्थन से शायद उन्हे बल मिला। वैष्णव अवतारवाद, एक देववाद से बहुदेववाद और बहुदेव से एक देववाद के सिद्धान्त की चर्चा उपनिषदों में है। विष्णु के सभी अवतार उनसे निकलकर उन्ही में समाहित होते है। वैष्णव दर्शन एकेश्वरवाद और बहुदेववाद के समन्वय का सर्वोत्तम उदाहरण है। यही वैष्णव दर्शन का मूल तत्व है।

वैष्णव दर्शन एकांतिक भक्ति पर जोर देता है। यह दर्शन 'तापस', 'दान', 'आर्जव', 'अहिंसा' तथा 'सत्यवचन' की प्रेरणा देता है। दर्शन के ये विचार नारायण, कृष्ण और उपनिषदों की देन हैं। आगे चलकर ये ही गीता की आधारभूमि बने। गीता–दर्शन पर आचार्य चतुरसेन श्शास्त्री बौद्ध का प्रभाव ढूढते है। परन्तु उपर्युक्त ऐतिहासिक विश्लेषणात्मक तथ्य इसका स्पष्ट खंडन करता है।

वैष्णव मत को राज्याश्रयः–

पूर्व मध्य युग में विष्णु और उनके अवतारों की प्रतिष्ठा भली–भांति हो चुकी थी। वे गरुड़ासन देव, चक्रस्वामी, त्रैलोक्य मोहन, वराह आदि नामों से पूजित थे।वह इतना लोकमान्य हो गया था कि विदेशी यात्रियों को भी उसने आकर्षित किया। साधरण जनता से लेकर बड़े–बड़े तक वैष्णव धर्मानुयायी थे। भारतीय समाज में वैष्णव मत उन्नति के शिखर पर था।काश्मीर में भी इस मत का अच्छा प्रचार था। काश्मीर नरेश अवंतिवर्मन (सन् 1855–84 ई0) परम वैष्णव था। काश्मीरीमहाकवि क्षेमेन्द्र (सन् 1966) में विष्णु के विभिन्न अवतारों को आधार बनाकर 'दशावतार चरित्र' की रचना की थी। अलबीरूनी स्थाणीश्वर के चक्रस्वामी (विष्णु) के मन्दिर का उल्लेख करता है। यह मन्दिर हिन्दुओं में बड़ा आदरित था। आसपास व दूर के लोग यहाँ पूजा हेतु आते रहते थे।

चंदेल राज्य सीमा में श्री विष्णु–भक्ति का बड़ा जोर था। खजुराहों में चंदेलों ने विष्णु के लिए भव्य मन्दिरों का निर्माण कराया था। चंदेलवंशी यशोवर्मा विष्णु का परम् उपासक था। उसने विष्णु की प्रसिद्ध मूर्ति कन्नौज से लाकर खजुराहों में स्थापित की थी। मध्य भारत का तत्कालीन समाज वैष्णवी अहिंसा से ओतप्रोत था। न केवल विष्णु और उसके अवतार पूजित थे, वरन् धर्म के सिद्धान्तों का भी पालन किया जाता था। राजा ही नहीं वरन् उनके कर्मचारी भी विष्णु–भक्त थे। परम्दिर्देव के प्रधान सचिव सुलक्षण ने भी विष्णु–मन्दिर का निर्माण कराया। खजुराहों का चतुर्भुज मन्दिर विष्णु की कीर्ति का प्रतीक बन गया। इस मन्दिर में विष्णु के वराह, नृसिंह, पूतनावध के अवतारों की कथा को कलात्मक रीति से उत्कीर्ण किया गया। इस काल के प्रसिद्ध नाटकार कृष्ण मिश्र भी विष्णु और नृसिंह की भक्ति का उपदेश देते हैं।

मालवा–निमाड़ मे भी वैष्णव मत का प्रचार था। इस क्षेत्र में राष्ट्रकूट, मौर्य और प्रतीहार वंश के नरेशों ने वैष्णव धर्म को भी समर्थन दिया था। परमार वंश यद्यपि शैव था परन्तु वे वैष्णव मत को भी मान्यता देते थे। क्योकि यह धर्म लोकमान्य था। मालवा के कई भागों में विष्णु–मन्दिरों की स्थापना की गयी थी। सन् 681 ई0 का पठारी अभिलेख दर्शाता है कि मालवा में विष्णु, मुरारी, कृष्ण और हरि नामों से पूजित थे। शंख, चक्र, गदा, माला के चिन्हो से युक्त विष्णु–मुर्ति का निर्माण आठवीं, नवीं सदी में धमनार में किया गया।मालवा–निमाड़ की सर्वसाधारण जनता भी विष्णु,उपासक थी। अल्ल नामक एक व्यक्ति ने ग्वालियर में चतुर्भज मन्दिर भगवान विष्णु को अर्पित किया था।

शैव होते हुए भी परमार नरेशों ने विष्णु के प्रति श्रद्धा–भक्ति प्रकट की थी उन्होने विष्णु के वाहन गरूड़ को अपना राज्य चिन्ह बनाया था। परमार सीयक द्वितीय का हरसीला ताम्रपत्र नृसिंह भगवान के प्रति उसकी श्रद्धा का परिचायक है। वाक्पतिराज द्वितीय ने भी 'राधा–विरहातुरा–मुरारी' के प्रति सम्मान प्रगट किया था। इस वंश का राजा तो वैष्णव हो गया था। उसने 'निर्वाण नारायण' का विरूद्ध धारण किया था। विष्णु के विभिन्न अवतारों के प्रति उसने भक्ति प्रकट की थी। विष्णु मन्दिरों के लिए उपवन लगाकर उन्हे दान में पूजार्थ दिया जाता था। महाराज सुभटवर्मन ने विष्णु के उपयोगार्थ उपवन लगाकर दान में दिया था। मालवा में विष्णु के नृसिंह, मत्स्य, वराह, कूर्म,कृष्ण, परशुराम,राम आदि अवतार पूजित थे। इनके संबंध में कथा–वार्ताएं भी प्रचलित एवं लोकमान्य थी।

निमाड़ में भी विष्णु और उनके विभिन्न अवतारों की पूजा–उपासना का प्रचलन था। निमाड़ के प्रसिद्ध शैव तीर्थ मान्धाता में 'दैत्य–सूदन' (विष्णु) के लिए देवालय का निर्माण किया गया था।अतः शिव–विष्णु के मध्य सहअस्तित्व कायम हो गया था। निमाड़ में परमार काल में ही कुछ और विष्णु मन्दिर बनाये गये। अतः निमाड़ की जनता शिव, विष्णु दोनो की उपासक थी। ग्यारहवीं सदी में अरथूना के बालपान की कथाएं अत्यन्त जनप्रिय उस काल में इस क्षेत्र में थी।

मध्य देश में भी वैष्णव मत काफी लोक–प्रचलित था। कृष्ण और उनकी गोपीलीला की कथाओं से लोग परिचित थे। सातवीं सदी का पेहोम अभिलेख 'श्रीकृष्ण गोपियों' का उल्लेख करता है।

RRIJM 2015, All Rights Reserved

सन्दर्भ–ग्रन्थ सूची

1. आर0सी0 मजूमदार, हिस्ट्री ऑफ बंगाल, वाल्यू0–1, पृ0 86।
2. भोज का यौधपुर प्रशस्ति – एपिग्राफिका इण्डिका, भाग 18, 50, 65।
3. एपिग्राफिका इण्डिका, भाग 4, पृ0 120।
4. वासदेव उपाध्याय, प्राचीन भारतीय अभिलेखों को सास्कृतिक अध्ययन, भाग 1,पृ0 56।
5. आर0 जी0 भंडारकर, वैष्णव,श्शैव एंव अन्य धार्मिक मत, पृ0 15।
6. जयशंकर मिश्र : प्राचीन भारत का सामाजिक इतिहास, पृ0 607।
7. जयशंकर मिश्र : प्राचीन भारत का सामाजिक इतिहास, पृ0 608।
8. चन्द्रभान पाण्डे : आंध्र – सातवाहन साम्राज्य का इतिहास, पृ0 131।
9. हंटर : द इंडियन एम्पायर, पृ0 192।
10. एच0 सी0 रायचौधरी : द अर्ली हिस्ट्री आफ वैष्णव सेक्ट।
11. सुवीरा जायसवाल : ओरिजन एंड डेवलमेंट आफ वैष्णवइज्म।
12. सुवीरा जायसवाल : ओरिजन एंड डेवलमेंट आफ वैष्णव सेक्ट,
13. आर0जी0 भंडारकर : वैष्णव, शैव एवं अन्य धार्मिक मत, पृ0 2।
14. भागवत पुराण : 3/18/19 मत्स्य पुराण : 246/49ए अग्नि पुराण : अध्याय 2/215।
15. द क्लासिकलः वैष्णव, शैव, एवं अन्य धार्मिक मत, पृ0 14–44।

RRIJM 2015, All Rights Reserved